International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 416-418

भारतीय समाज की सरंचना और डॉ. मनोहर लोहिया

अखिलेश त्रिपाठी
राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारत में जितनी भी सामाजिक असमानताएँ विद्यमान हैं उन सबका उद्भव जाति प्रथा का ही परिणाम है। जब तक जातिगत असमानताएँ पूर्णतया समाप्त नहीं की जाती तब तक समाजवाद की स्थापना सम्भव नहीं है, क्योंकि सामाजिक और आर्थिक समता की स्थापना समाजवाद का मुख्य लक्ष्य होता है। आर्थिक असमता और जाति–पात जुड़वा राक्षस हैं और एक से लड़ना है तो दूसरे से भी लड़ना जरूरी है।[1] जाति प्रथा निम्नजातियों को आध्यात्मिक क्षमता से वंचित कर देती है, जितना वह उन्हें आध्यात्मिक समता से दूर रखती है, उतना ही उन्हें सामाजिक समानता से भी। पंडित नेहरू एवं डॉ0 लोहिया दोनों विचारकों की मान्यता थी कि कर्म की प्रतिष्ठा होनी चाहिए। जब तक हमारे समाज में कर्म प्रधान रहा तब तक हमारे समाज में रुढ़ि जैसी सामाजिक बेड़ियाँ नहीं थी, किन्तु जाति का आधार वंशानुगत हो जाने से जाति व्यवस्था में सामाजिक विषमताएँ उत्पन्न होने लगी। मनुष्य नैसर्गिक रूप से कर्म करना चाहता है जो उसके स्वभावानुकूल है। इसी मूल प्रवृत्ति से वह जाति व्यवस्था को तोड़कर जो कि वर्ग की द्योतक है, जातिविहीन समाज की परिकल्पना की जा सकती है। जाति का आधार कर्म होना चाहिए न कि जन्म। जन्म के आधार पर किसी उच्च वर्ग का चरण स्पर्श करने का अभिप्राय होता है– जाति प्रथा, गरीबी और दुःख दर्द को बनाये रखने की प्रत्याभूति, क्योंकि जिसके हाथ सार्वजनिक रुप से ब्राह्मणों के पैर धो सकते हैं उसके पैर शूद्रों को ठोकर भी मार सकते हैं।[2] जहाँ गरीब समूहों तथा शूद्रों को ठोकर मारने की स्थिति हो वहाँ समाजवाद की कल्पना निरर्थक है। इस प्रकार समाजवाद के लिए जितना आवश्यक वर्ग उन्मूलन है उतना ही जाति उन्मूलन।

आधुनिक जाति व्यवस्था वर्ण व्यवस्था का परिवर्तित रुप है। वर्ण व्यवस्था भारतीय समाज की अनोखी व्यवस्था थी। वर्ण व्यवस्था योग्यता पर आधारित थी। वर्ण व्यवस्था कर्म के आधार पर बनी थी जिसकी पाश्चात्य एवं आधुनिक भारतीय विचारकों ने भूरि–भूरि प्रशंसा की है और जाति प्रथा को वर्तमान दोषों से मुक्त करने के लिए उसके प्राचीन रुप (वर्ण व्यवस्था) में परिवर्तित करने के विचार भी डॉ0 भगवान दास जैसे विचारकों ने व्यक्त किया था। यदि जाति प्रथा को उसके प्राचीन रुप में परिवर्तित कर दिया जाय तो सामाजिक समस्याओं का समाधान हो सकता है लेकिन यह विचार जहाँ सरल सा प्रतीत होता है वहाँ असम्भव भी है क्योंकि आज इस वर्ण व्यवस्था को पुनः लागू करने में कितनी कठिनाइयाँ पैदा हो सकती हैं, उनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

वर्ण व्यवस्था सेवाओं और धन्धों के आधार पर बनी एक वर्ग व्यवस्था थी। समान नियम लागू किये बिना और हर वर्ग को पूर्ण स्वतंत्राता देते हुए इसका उद्देश्य सभी वर्गों को एक व्यवस्था के अन्दर ले आना था। किसी भी अल्पसंख्यक वर्ग को बहुसंख्यक वर्ग की अधीनता स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं थी।[3]

वर्ण व्यवस्था का जो आधुनिक रुप है, उसमें इतनी विषमताएं पैदा हो गयी हैं कि इसके सम्बन्ध में भी विद्वान विश्लेषण कर्त्ता दो वर्गों में विभक्त हो गये हैं। प्रथम वर्ग उसके प्राचीन रुप का गुणगान करता है तथा जातियों के मध्य मैत्री भाव का प्रस्ताव रखता है, इनका प्रतिनिधित्व गांधी जैसे व्यक्तित्व वाले उच्च बौद्धिक नेता करते हैं तथा दूसरा वर्ग इस व्यवस्था का समूल विनाश चाहता है, इनका प्रतिनिधित्व आधुनिक समाजवादी और साम्यवादी विचारक करते हैं।

जाति प्रथा, भारत के अधः पतन का कारण

समाजवाद के दोनों पुरोधा पंडित नेहरू एवं डॉ0 लोहिया जाति व्यवस्था को जड़ व्यवस्था का परिचायक मानते हैं। पंडित नेहरू एवं डॉ0 लोहिया दोनो विचारकों का मानना है कि जाति व्यवस्था जड़ व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करती है। ऐसा इस लिए कि यह व्यवस्था इतनी जड़ एवं रुढ़िवादी है कि एक जाति का मनुष्य दूसरी जाति में प्रवेश के लिए अयोग्य होता है। जाति व्यवस्था मनुष्य को सामाजिक दृष्टि से चारों तरफ से अपने बाहुपाश में जकड़ लेती है, जिससे निकलना मनुष्य के लिए असम्भव है।[4] इस जाति–पाश के कारण भारत का समग्र सामाजिक जीवन निष्प्राण हो गया है। भारतीय समाज का व्यक्ति हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख और ईसाई के नाम पर विभाजित है और हिन्दू समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र जातियों में विभाजित है साथ ही साथ इन जातियों में अनेक उपजातियां है। ये समस्त जातियाँ यहाँ तक विभाजित हैं कि वे एक दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध तक कायम रखने में अपने को असमर्थ पाती हैं। भारत का समाज प्रारम्भ से ही एक अनोखी समाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था लिए हुए है। समाज के वर्गों में प्रारम्भ से ही अलगाव एवं पृथक्कता की भावना विद्यमान थी, जिसे प्राकृतिक माना जाता था।[5] इसी के समान डॉ0 लोहिया ने जाति व्यवस्था की नकारात्मकता पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि ‘‘जीवन के बड़े–बड़े तथ्य जन्म मृत्यु, विवाह, भोज और अन्य रश्में जाति की चौखट में ही होती हैं। ऐसे अवसर पर दूसरी जाति के लोग किनारे पर रहते हैं, जैसे अलग और तमाशबीन हों।[6]

हिन्दू समाज में आचार की शुद्धता का बहुत बड़ा विचार रहा है। इसका एक अच्छा परिणाम रहा और बहुत से बुरे परिणाम हुए। आचार–विचार सम्बन्धी शुद्धता का दूसरा परिणाम हुआ– अलग रहने की प्रवृत्ति और छूआ–छूत मे वृद्धि और गैर जाति वालों के साथ खाना–पीना मना किया गया।[7] जाति व्यवस्था में जटिलता को बढ़ावा देने में उच्च वर्ण के व्यक्तियों का सहयोग अधिकाधिक रहा है। परिणाम स्वरूप रक्त और कर्म की शुद्धता ने समाज में अलगाव की भावना पैदा की। परिणाम यह हुआ कि आज भारतीय समाज एक विखण्डित समाज में बदल गया है। डॉ0 लोहिया के अनुसार ब्राह्मणी संस्कृति, ब्राह्मणवाद, सामन्तवाद और पूंजीवाद का पोषक तथा जनक है।[8] अतः जब तक यहाँ पर ब्राह्मणवाद और बनियावाद का मूलोच्छेदन नहीं होता तब तक समाजवाद की कल्पना केवल स्वप्न बन कर रह जायेगी। डॉ0 लोहिया के विचार में कटुता का कुछ अंश अवश्य हो सकता है किन्तु यथार्थ से व सत्य से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता हैं। भारतीय समाज में इस प्रथा के थोपने वाले उच्च वर्ग के कुछ ऐसे व्यक्ति रहे हैं, जिन्होंने ऐसी

व्यवस्था निर्मित की जिसमें मस्तिष्क का राजा ब्राह्मण वर्ग तथा उत्पादन का राजा वैश्य वर्ग को बनाया गया। युद्ध तथा सेवाश्रम का कार्य क्रमशः क्षत्रिय तथा शूद्र वर्ग पर आरोपित किया गया।

जय प्रकाश नारायण ने जाति प्रथा की जटिलता के लिए ब्राह्मण को उत्तरदायी बताया है। ऐसा इसलिए कि ब्राह्मण वर्ग प्रारम्भ से ही शिक्षित वर्ग रहा है। इस वर्ग ने अपनी उच्चता कायम रखने के लिए सामाजिक नियमों का सृजन किया। जय प्रकाश नारायण के इस विचार में बहुत कुछ वास्तविकता का अंश है, इसे अमान्य नहीं किया जा सकता है तो दूसरी ओर पंडित नेहरू जाति प्रथा को सामाजिक अधः पतन के लिए जिम्मेदार बताते हैं और कहते हैं जब तक जाति प्रथा अपने प्राचीनतम रूप में कायम रही तब तक समाज का विकास होता रहा। परन्तु पिछले सौ वर्षों से इसने राष्ट्रीय और सामाजिक ढांचे को अत्यधिक कमजोर बना दिया है। उच्च वर्ग के समूहों ने निम्न वर्ग का अत्यधिक शोषण किया है। इसका मुख्य प्रभाव यह हुआ कि भारत का अधः पतन हुआ है।[9]

डॉ0 लोहिया ने इतिहास का सूक्ष्म अध्ययन और अनुशीलन किया था। इतिहास के आधार पर डॉ0 लोहिया ने यह सिद्ध किया है कि भारत वर्ष की एक हजार वर्ष की दासता का कारण जाति है, आन्तरिक झगड़े और छल कपट नहीं।[10] जब किसी देश में जाति के बंधन ढीले होते हैं तब वह देश विदेशी आक्रमण के समक्ष नतमस्तक नहीं होता है। हमारे देश में जाति के बन्धन सदैव कठोर रहे हैं। जाति प्रथा निम्न वर्णो की जातियों को सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, बौद्धिक एवं राजनीतिक आदि दृष्टियों से पतित कर देती है जिनका सामाजिक परिणाम यह होता है कि वे सार्वजनिक कार्यों और रक्षा जैसे महत्वपूर्ण कार्यो के प्रति उदासीन रहते हैं। ये सार्वजनिक जीवन से बहिष्कृत समझे जाते हैं और उनमें से किसी में भी नेतृत्व की सृष्टि नहीं हो पाती। केवल उच्च जाति के सदस्य ही नेतृत्व करते हैं। विदेशी आक्रमण के सामने असंगठित समाज घुटने टेक देता है क्योंकि जाति प्रथा नब्बे प्रतिशत को दर्शक बना देती है, ये वास्तव में देश की दारूण घटनाओं के निरीह और लगभग पूरे उदासीन दर्शक हैं।[11]

जाति प्रथा की जटिलता की ओर लक्ष्य करते हुए डॉ0 लोहिया ने पंडित नेहरू को वशिष्ठी परम्परा का कट्टर ब्राह्मणवादी घोषित किया था। वशिष्ठवाद के सन्दर्भ में उनका कहना था कि स्वार्थ की रक्षा के लिए क्रोध से अभिभूत होकर किसी को देश निकाला (सीता सन्दर्भ) और किसी का सिर काटने (शम्बुक संदर्भ) की प्रवृत्ति कट्टरता की परम्परा हैं। यह वशिष्ठी परम्परा है। उदारता की परम्परा तो बाल्मीकि की परम्परा है।[12]

डॉ0 लोहिया का समाजवाद सैद्धान्तिक होने के साथ–साथ व्यावहारिक एवं प्रासंगिक भी है। डॉ0 लोहिया समाजवाद की स्थापना के लिए वर्ग उन्मूलन के पक्षपोषक हैं परन्तु भारतीय संदर्भ में डॉ0 लोहिया ने वर्ग को जाति के समीकरण से समीकृत किया है। जाति और वर्ग के परस्पर सम्बन्धों की चर्चा करते हुए डॉ0 लोहिया ने यह बताया कि भारत में वर्ग का रूपान्तरण जाति में तथा जाति का रूपान्तरण वर्ग में होता है। वर्ग स्थिर और जड़ हो रहे हैं और यह स्थिरता और जड़ता उन्हें जाति में बदलती जा रही है। डॉ0 लोहिया के अनुसार जाति आकांक्षा हीन जड़ वर्ग है। यह जातियाँ हजारों वर्षो से विकृत धर्मान्धता के आधार पर अन्धी यथा स्थितिवादी परम्परा और वंश कुल की श्रेष्ठता और हीनता के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में विभक्त हैं। यही श्रेणियाँ, ऊँची, नीची, मध्यम, अन्तज्य के रूप में जातियाँ बन गयी हैं। भारत की सारी वर्ग चेतना जाति चेतना में बदल जाती है। सिद्धान्ततः इन जातियों को फिर वर्ग में बदल जाना चाहिए किन्तु नितान्त उपेक्षित होने पर भी जाति वर्ग के रूप में बदल नहीं पाती है। डॉ0 लोहिया ''जड़ जाति चेतना'' को वर्ग में बदलना चाहते हैं। यदि जाति व्यवस्था में किसी प्रकार की आर्थिक और राजनीतिक आकांक्षा भर दी जाय तो और वह उसके तहत गतिशील हो जाय, तो सारी की सारी जातियां वर्ग में बदल जायेंगी।13 डॉ0 लोहिया का मत था कि भारतीय जाति व्यवस्था मात्रा वर्णाश्रम धर्म से नहीं बनी हैं। इसके पीछे ऐतिहासिक गति की वक्रता भी है।[14]

इस प्रकार पंडित नेहरू और डॉ0 लोहिया ने जाति व्यवस्था या जाति प्रथा को ही भारत की दासता का एक मात्रा कारण बताया है। जातिप्रथा भारत की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक अवनति का एक कारक अवश्य है परन्तु इसके अतिरिक्त भी अन्य कारक उत्तरदायी हैं। वास्तविकता यह है कि जाति प्रथा के अतिरिक्त सामन्तवादी प्रवृत्ति का अस्तित्व, पारस्परिक मतभेद महत्वपूर्ण रूप से उत्तरदायी रहे हैं। वास्तविकता यह रही है कि भारत की सामाजिक समस्या का मूल कारण सामन्तवाद रहा है, भारत कभी भी मानसिक रूप से सामन्तवादी प्रवृत्ति से विमुक्त नहीं हो पाया। हाँ यह अवश्य रहा है कि समयानुसार इसके स्वरूप में अपेक्षित परिवर्तन होता रहा है। समाज के मानस पटल पर आज भी सामन्तवाद की प्रवृत्ति अंकित है जो सामाजिक जीवन को गहरे रूप में अनुप्राणित करती है।

परन्तु डॉ0 लोहिया का सूक्ष्म विश्लेषण भारत के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संदर्भो में हुआ था, डॉ0 लोहिया के जाति एवं उसके सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संदर्भ सम्बन्धी विचार अत्यन्त समीचीन हैं। वह वर्तमान दशा को अतीत से तार्किक एवं वैज्ञानिक ढंग से समीकृत करते हैं। डॉ0 लोहिया एक मात्रा ऐसे समाजवादी चिन्तक हैं जिन्होंने भारत को गहरे रूप से समझने एवं पढ़ने को प्रयास किया था।

इसी प्रकारपण्डित नेहरू पाश्चात्य देश में पढ़े लिखे, यूरोपीय संस्कार एवं शैली से अनुप्रेरित थे परन्तु वैचारिक रूप से मार्क्स एवं ब्रिटेन के उदारवादी समाजवाद से अनुप्राणित तथा महात्मा गांधी के स्नेहिल संरक्षण में स्वतंत्राता आन्दोलन में सक्रिय सहयोग देने वाले पंडित नेहरू भी जाति की जड़ता एवं जटिलता से अत्यन्त क्षुब्ध थे तथा इसे भारत के विकास के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा मानते थे। इसके अन्त के लिए वह प्रत्येक अवसर पर सक्रिय रहे। छुआ छूत को कानूनी अपराध, दलितों के लिए आरक्षण जैसे संवैधानिक प्रावधान तथा भारत की संविधान सभा से इसका पारेषण जाति व्यवस्था के विरूद्ध पंडित नेहरू का एक सकारात्मक हस्तक्षेप तथा सद्प्रयास था।[15]

परन्तु इसके साथ ही पंडित नेहरू एवं डॉ0 लोहिया के विचारों का अपना महत्व है जो आज भी सामाजिक सत्य की विधमानता को रेखांकित करता है। इन विद्वानों का मानना है कि आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए वही हैं जो सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। परिणाम स्वरूप सामाजिक विषमता के साथ–साथ आर्थिक विषमता भी द्विगुणित हुई है। फलतः आर्थिक वर्गों एवं सामाजिक वर्णो में ऐसा सम्बन्ध प्रतिस्थापित है जो एक दीर्घकालिक प्रक्रिया का परिणाम है जिसके अनुसार आर्थिक विपन्नता सामाजिक विपन्नता बन गयी है। जाति भारत में विशेषाधिकार की श्रेणी में आती है। ऊँची जाति के लोग जन्मना ही श्रेष्ठ मान लिये जाते हैं। नीची जाति के लोग बिना किसी अपराध के जन्म लेते ही निम्न करार दिये जाते हैं। इस भेद को मिटाने के लिए डॉ0 लोहिया ने ''जाति तोड़ो आन्दोलन'' चलाया। जाति की विशिष्टता और उसके आधार पर जो विशेषाधिकार प्राप्त हुए हैं उसके विरूद्ध डॉ0 लोहिया ने ये आन्दोलन चलाये। अपने जीवन काल में डॉ0 लोहिया ने कई सम्मेलन आयोजित किये। डॉ0 लोहिया ने सामूहिक सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह का पक्षपोषण किया। इन्होंने पिछड़ी जातियों, हरिजनों और आदिवासियों को राष्ट्रीय मुख्य धारा में सम्मिलित करने के लिए साठ प्रतिशत आरक्षण और विशेष अवसर की बात उठाई। डॉ0 लोहिया का मानना था कि जाति के आधार पर शोषण का निराकरण तभी सम्भव है जब इन उपेक्षित जातियों को सामान्य

अवर के सिद्धान्त की अपेक्षा विशेष अवसर का सिद्धान्त मानकर विकसित करने अवसर मिलेगा। और जाति तोड़ो आन्दोलन में विशेषकर अवसर और आरक्षण के आधार पर जातियों के बीच गहरी खाइयों को पाटने की कोशिश की जायेगी।[16] अपने प्रस्ताव के पक्ष में डॉ0 लोहिया ने कुछ अतिशयोक्ति पूर्ण बातें भी कही हैं जैसे उन्होंने अनिवार्य रूप से राजकीय सेवाओं में तथा शासन में सम्मिलित होने का अवसर प्रदान किया जाय, चाहे उन पदों के योग्य हों या नहीं। डॉ0 लोहिया का तर्क था कि जब तक पिछड़ी जातियों को जबरदस्ती राजनीतिक या अन्य सुविधाएं नहीं दी जाती जाति प्रथा का विभाजन बना रहेगा और समाज सदा ही शोषण एवं सर्वनाश की चक्की में पिसता रहेगा। उनके अनुसार अवसर देने के लिए जब तक योग्यता की कसौटी रहेगी हिन्दुस्तान की जनता अपनी योग्यता से वंचित रहेगी।[17] परन्तु डॉ0 लोहिया का चिन्तन तत्कालीन समय के लिए प्रासंगिक हो सकता था लेकिन वह प्रत्येक समय के लिए समीचीन नहीं हो सकता। आधुनिक दलित विमर्श के दलित चिन्तकों ने वर्तमान उदारीकरण की एक रोचक व्याख्या की है। दलित चिन्तकों का एक समूह उदारीकरण और वैश्वीकरण दोनों को देश के वंचित समूहों के हित में मानते हुए इसका अनुसमर्थन कर रहा है। इनका

सन्दर्भ सूचि

1. जाति प्रथा : डा0 राम मनोहर लोहिया, नव हिन्द प्रकाशन, बेगम बाजार हैदराबाद, 1964 पृष्ठ संख्या 18
2. उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या 3
3. हिन्दुस्तान की कहानी : पण्डित जवाहर लाल नेहरू सम्पादक– चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय, संस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली, तृतीय संस्करण 1966। पृष्ठ संख्या 170
4. कास्ट, क्लाख एण्ड पालिटिक्स : अनिल भट्ट मनोहर बुक कम्पनी नई दिल्ली 1975। पृष्ठ संख्या 70।
5. नेशनल बिल्डिंग इन इण्डिया : जय प्रकाश नारायण, सर्व सेवा संघ वाराणसी 1965। पृष्ठ संख्या 18।
6. जाति प्रथा : डा0 राम मनोहर लोहिया, नव हिन्द प्रकाशन, बेगम बाजार हैदराबाद, 1964 पृष्ठ संख्या 83।
7. हिन्दुस्तान की कहानी : पण्डित जवाहर लाल नेहरू सम्पादक : चन्द्र गुप्त वार्ष्णेय सस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली, तृतीय संस्करण 1966, पृष्ठ संख्या 172।
8. 10 सितम्बर सन 1957 ई0 को चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु को डा0 लोहिया द्वारा लिखे गये पत्रा से। (समाजवादी बुलेटिन नवम्बर, 2003 के अंक से)
9. 16 दिसम्बर को सन् 1955 ई0 में त्रिचूर में दिये गये पण्डित नेहरू के भाषण से।
10. 13 दिसम्बर सन् 1959, लखनऊ में डा0 लोहिया द्वारा दिये भाषण से। (समाजवादी बुलेटिन, नवम्बर 2003 के अंक से)
11. जाति प्रथा : डा0 राम मनोहर लोहिया नव हिन्द प्रकाशन, बेगम बाजार हैदराबाद 1964 पृष्ठ संख्या 84।
12. क्या मायावती सिर्फ दलितों की मुख्यमंत्राी हैं? अग्रलेख : हेमन्त शर्मा, सम्पादकीय पृष्ठ, दैनिक, हिन्दुस्तान वाराणसी/लखनऊ संस्करण, 1 अगस्त 2002।
13. समाजवादी दर्शन और डा0 लोहिया : लक्ष्मी कान्त वर्मा सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश लखनऊ 1991। पृष्ठ संख्या 78–79
14. उपर्युक्त पृष्ठ संख्या 80।
15. उदारीकरण के दौर में वंचित, अग्रलेख : दिलीप मण्डल, सम्पादकीय पृष्ठ, दैनिक, हिन्दुस्तान वाराणसी/लखनऊ 28 मई 2005।
16. का×चन मुक्तिः डॉ0 राम मनोहर लोहिया नव हिन्द प्रकाशन हैदराबाद, पृष्ठ संख्या 32।
17. निराशा के कर्तव्य ; डॉ0 राम मनोहर लोहिया समता प्रकाशन हैदराबाद 1970 पृष्ठ संख्या 28।